

बच्चों का कक्षा में मूल्यांकन द्वारा सामाजिक स्तरीकरण एक समीक्षा

एम.एम. रॉय*
मीना सहरावत**

शिक्षा पर सभी का अधिकार है चाहे वह किसी भी सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आया हुआ बच्चा हो। शिक्षक का कर्तव्य है कि वह बच्चे की पृष्ठभूमि को समझे और उसके अनुभव को कक्षा में सम्मान दे, यदि ऐसा नहीं होता है तो इसी प्रकार के बच्चे कक्षा में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया से अलग हो जाते हैं और ऐसा अधिक होने पर स्कूल छोड़ने का एक कारण बनते हैं। बच्चों का सीखने के एक ही पक्ष से संबंध नहीं होता है जैसा कि स्कूलों में मापा और जाँचा जाता है ऐसी रूढ़िवादी मूल्यांकन की प्रक्रिया के द्वारा शिक्षक ऐसे बच्चों पर ना सीखने का सूचक लगा देते हैं। जबकि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के अनुसार मूल्यांकन का यह आशय बिल्कुल भी नहीं है। इस लेख का उद्देश्य सिर्फ यही है कि हम सभी यह पहचान पाएँ कि बच्चों की सामाजिक पृष्ठभूमि, उनके अनुभव और मूल्यांकन करने के तरीके कहीं उनके सीखने के बीच में अवरोधक ना बने और सभी को सीखने का मौका मिले जिससे कि उनकी विविधता और अनुभव का सम्मान कक्षा में हो।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय उद्देश्य के रूप में समाज का समाजवादी ढाँचा स्वीकार किया गया और यह भी घोषित किया गया कि जाति निरपेक्ष और वर्ग निरपेक्ष समाज की स्थापना के लिए लोकतांत्रिक समाजवाद का राष्ट्रीय लक्ष्य स्वीकार किया जाए जो लोकतंत्र व्यक्ति की प्रतिष्ठा और सामाजिक न्याय पर आधारित हो तथा जिसे लोकतांत्रिक साधनों द्वारा प्राप्त किया जाए। लोकतंत्र की माँग प्रबुद्ध नागरिक की माँग है, अतः शिक्षा की पहुँच जन-जन तक होनी चाहिए। शिक्षा का सार्वजनीकरण लोकतंत्र की पुकार

है। लोकतंत्र में यह आवश्यक और अपरिहार्य है कि विकास के स्तर चाहे कुछ भी क्यों ना हों उसके शैक्षिक कार्यक्रम ऐसे होने चाहिए कि प्राथमिक स्तर की शिक्षा में बच्चों की बुनियाद अथवा सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। लोकतंत्र में सामाजिक एवं आर्थिक क्षमता को मान्यता मिलनी चाहिए।

प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर प्रदान करना आवश्यक है जिससे मानव मानव के बीच विद्यमान भेदों के रहते हुए वह अपनी क्षमताओं को अधिक से अधिक विकसित कर सके और इस प्रकार से समाज

* सहायक आचार्य, पाठ्यचर्या एवं शिक्षणशास्त्र संकाय, जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान, घुमनहेड़ा, नयी दिल्ली

** सहायक आचार्य, पाठ्यचर्या एवं शिक्षणशास्त्र संकाय, जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान, घुमनहेड़ा, नयी दिल्ली

में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तिगत भेद को स्वीकार करते हुए भी सभी को शिक्षा का शुभ अवसर प्रदान करना है। हमारे विद्यालयों में 6 से 14 वर्ष तक के आयु वर्ग के बच्चों को पहली से आठवीं कक्षा तक प्रारंभिक शिक्षा प्रदान की जाती है। *शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009* में धारा 13 में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार उपरोक्त आयु वर्ग के प्रत्येक बच्चे का है।

प्राथमिक विद्यालयों में आने वाले सभी बच्चों को अनेक अनुभव प्राप्त होते हैं और यह अनुभव सभी बच्चों के एक जैसे नहीं होते हैं। इस भेद का कारण यह है कि विद्यालय में भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि वाले बच्चे पढ़ने आते हैं और उनके परिवारों के वातावरण में अंतर होता है। वे भिन्न-भिन्न समुदाय, सामाजिक वर्ग, आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्तरों वाले परिवार से होते हैं। विद्यालयों में बच्चे जो कुछ भी और जैसे सीखते हैं उसमें यह ज्वलंत विभेद और समानता का मूल कारण है अतः यह कहना ही होगा कि बच्चा परिवार और अपने सांस्कृतिक वातावरण में जो कुछ सीखता है अपने उसी अनुभव को विद्यालय में भी लेकर आता है और इस प्रकार से वे अलग-अलग सामाजिक और सांस्कृतिक अंतरों को प्रतिबिंबित करते हैं और ठीक उसी प्रकार शिक्षक भी अलग-अलग सामाजिक वातावरण से आते हैं अतः यह बिल्कुल स्पष्ट है कि उनके वातावरण का अंतर जीवन और कार्य के प्रति उनके दृष्टिकोण को प्रभावित करता है। बच्चे और शिक्षक विद्यालय में एक छोटे समाज की ओर कक्षा में उससे भी छोटे समाज की स्थापना कर लेते हैं।

सभी बच्चों को सीखने का अधिकार है, ऐसा बाल अधिकार सम्मेलन में पहले ही तय किया जा चुका है जिसे विश्व की सभी सरकारों ने सहमति

प्रदान की है। इसके अतिरिक्त सभी बच्चे सीख सकते हैं चाहे उनकी शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, भावनात्मक और भाषागत सामान्य स्थितियाँ चाहे जो भी हों। अभी आप ऊपर पढ़ चुके हैं कि विद्यालय में भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि वाले बच्चे पढ़ने आते हैं जैसे अक्षम और असामान्य बच्चे, गलियों में घूमने वाले और कामकाजी बच्चे, सुदूरवर्ती क्षेत्रों के भाषागत, प्रजातीय या सांस्कृतिक आधार वाले बच्चे। आपने यह भी पढ़ा है कि किस प्रकार से एक विद्यालय और कक्षा एक लघु समाज का रूप है जहाँ पर विभिन्न पृष्ठभूमि से आए बच्चों का अपना अनुभव है और यह बच्चे अपनी गति से सीखते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि—

- क्या इन सभी बच्चों को पढ़ाने का तरीका एक होगा?
- क्या इन बच्चों को पढ़ाना चुनौती है?
- क्या इन सभी बच्चों का मूल्यांकन करने का तरीका भी एक होगा?

ऐसे बच्चों को पढ़ाना अवश्य ही एक चुनौती है और ये लोग प्रभावपूर्ण ढंग से सीख सकते हैं यदि उनको सीखने का अवसर मिले। बच्चे क्योंकि विविध पृष्ठभूमि और अनुभव लिए होते हैं वे सक्रिय रूप से अपना ज्ञान और उसका अर्थ स्वयं निर्मित कर सकते हैं। बच्चे नयी जानकारी को पहले से प्राप्त जानकारी के साथ संबंधित करते हुए या अपने पूर्व ज्ञान से सीखते हैं, जैसे— एक दूसरे से बात करना, सवाल पूछना, चर्चा करना, अवलोकन करना आदि तरीके, कक्षा में या कक्षा के बाहर सामाजिक अंतः क्रियाएँ हैं जिनके द्वारा बच्चे ठोस रूप में सीखते हैं। इसलिए जोड़ों में या समूह में कार्य करना अधिक

महत्वपूर्ण होता है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में वह चाहे स्कूल में हो या बाहर सभी जगह बच्चों की भागीदारी ज़रूरी है खासकर शारीरिक व मानसिक रूप से असमर्थ बच्चे, समाज के हाशिए पर जीने वाले बच्चे तथा कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को शिक्षा के सबसे ज़्यादा फ़ायदे मिलने चाहिए। अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने के मौके और सहपाठियों के साथ सीखने के मौके देना बच्चों में प्रोत्साहन और जुड़ाव को पोषण देने के शक्तिशाली तरीकों में से एक है लेकिन अकसर विद्यालय में आकर सीखने-सिखाने की गतिविधियों में शिक्षक के द्वारा कुछ गिने-चुने बच्चों को ही बार-बार चुना जाता है। इस छोटे समूह को तो ऐसे अवसरों से फ़ायदा होता है और उनका आत्मविश्वास भी बढ़ता है तथा विद्यालय में लोकप्रिय भी हो जाते हैं लेकिन दूसरे बच्चे उपेक्षित महसूस करते हैं और उनको पहचाने जाने एवं स्वीकृति की इच्छा उनके मन में लगातार बनी रहती है। अवसर सभी बच्चों को मिलना चाहिए और सभी बच्चों की विशिष्टताओं को पहचानना भी जाना चाहिए।

क्या आपको अपनी कक्षा का कोई ऐसा सहपाठी याद है जो आमतौर पर गुमसुम रहता था, सहभागिता पसंद नहीं करता था और साथ ही सीखने में पिछड़ जाता था? ऐसे बच्चों का आत्मसम्मान कम होना उनके इस व्यवहार का एक मुख्य कारण हो सकता है। ऐसे बच्चे अपनी क्षमताओं को लेकर विश्वास से भरे नहीं होते हैं और सोचते हैं कि वे इस कक्षा के कोई महत्वपूर्ण सदस्य भी नहीं हैं।

कई अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि बच्चों के स्वयं के बारे में निर्मित दृष्टिकोण के सीखने की उपलब्धि के बीच निकट संबंध होता है। ऐसे बच्चों के प्रति नकारात्मक टिप्पणी से उनका आत्मसम्मान

भी कमज़ोर हो जाता है जैसे किसी शिक्षक ने कहा कि देखो तुमने कितने सवाल गलत किए हैं, यह एक नकारात्मक टिप्पणी है; दूसरा इसको ऐसे भी कहा जा सकता है देखो तुमने कितने सवाल सही किए हैं और अगली बार तुम इससे और अधिक सवाल सही कर सकते हो। तुम्हें क्या लगता है कि तुमने कहाँ गलती की है? आओ तुम्हारी गलती को मिलकर खोजें। यह एक सकारात्मक टिप्पणी है। जब विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमि/लिंग या अन्य पृष्ठभूमि वाले बच्चों को मान्यता नहीं दी जाती है या उनकी विशेषताओं को लेकर उन्हें नीचा दिखाने के लिए उपयोग किया जाता है, तब बच्चे बहुत ज़्यादा आहत होते हैं।

शिक्षक के द्वारा यदि कोई गतिविधि आयोजित की जाती है जिसमें विशेष ज़रूरत वाले बच्चे भी शामिल हैं और जिन्हें दिए गए कार्य को पूरा करने में ज़्यादा समय लगता है या उनको मदद की ज़रूरत होती है। शिक्षक ऐसे बच्चों को छोड़कर अन्य बच्चों को गतिविधि की योजना बनाने में शामिल करते हैं तो विशेष ज़रूरत वाले बच्चे आहत होते हैं। अच्छा तो यह होता कि गतिविधि की योजना बनाने से लेकर उसको कार्यान्वित करने तक में शिक्षक सभी बच्चों को शामिल करें और उनकी सहभागिता सुनिश्चित करें जिससे कि प्रत्येक बच्चा अपना योगदान दे पाए।

प्रतियोगिता पर अत्यधिक बल और व्यक्तिगत सफलताएँ कई विद्यालयों की पहचान बनती जा रही हैं लेकिन इससे उनके शैक्षिक लक्ष्य भी पूरे नहीं हो पाते हैं क्योंकि स्पर्धा की अत्यधिक भावना किसी दूसरे से बेहतर करने के लक्ष्य को बढ़ावा देती है। परंतु बच्चों में स्पर्धा की अत्यधिक भावना विद्यालय के अंदर के सामाजिक रिश्तों को नष्ट कर देती है जिससे

सहपाठियों के संबंधों पर प्रतिकूल असर पड़ता है और साथ में सहयोग और संवेदनशीलता के मूल्यों को भी क्षति पहुँचती है। ऐसे विद्यालयों में बच्चों को संकीर्ण संज्ञानात्मक आधार पर वर्गीकृत करके विद्यालय उस विविधता को भी क्षति पहुँचाते हैं जो बच्चों की क्षमताओं और प्रतिभाओं में होती है, जैसे— श्रेष्ठ, सामान्य, सामान्य से कम, पास या फिर फेल। समाज में पहले से व्याप्त विभिन्न सामाजिक स्तरीकरण और फिर कक्षा में भी इस तरह के सामाजिक स्तरीकरण की प्रक्रिया का बच्चे पर बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और तो और कुछ बच्चों को मंदबुद्धि कहकर उन्हें अलग भी बैठाया जाता है और ऐसे सूचक कक्षा में लगा दिए जाते हैं जिससे बच्चों का विभाजन बहुत ही स्पष्ट दिखने लगता है। सही उत्तर पता नहीं होने का भय और विभाजन सीखने की सारी जिम्मेदारियाँ बच्चों पर डाल देते हैं।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के अनुसार, “एक अच्छी मूल्यांकन और परीक्षा पद्धति सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन सकती है जिसमें विद्यार्थी और शिक्षा तंत्र दोनों को ही विवेचनात्मक और आलोचनात्मक प्रतिपुष्टि से फ़ायदा हो सकता है। मूल्यांकन शिक्षा में हमेशा से उद्देश्य क्रियान्वयन से जुड़ा रहा। यह स्वयं में एक प्रक्रिया है जो कार्य योजना का निर्धारण करती है तथा समाज, राष्ट्र तथा मानव जाति के हित के लिए संतति करती है”।

अगर हम शिक्षा को सार्थकतापूर्ण जीवन की तैयारी मानें तो वर्तमान मूल्यांकन की प्रक्रिया जो मस्तिष्क के बहुत ही कम संकाय को मापती एवं जाँचती है। यह व्यक्ति की योग्यता अथवा शैक्षिक उद्देश्यों की और इसकी प्रगति की सही तस्वीर देने में अपर्याप्त एवं असफल है। आकलन बच्चों के केवल

निष्पत्ति की गुणवत्ता देखने की प्रक्रिया नहीं है बल्कि यह सीखने के विभिन्न क्षेत्रों में बच्चों के सीखने के स्तर के बारे में राय बनाने के लिए, प्रमाणों को इकट्ठा करने, विश्लेषण करने और निष्कर्ष निकालने की प्रक्रिया है जिसका लक्ष्य निष्पत्ति में सुधार होता है, न कि यह जानने के लिए की बच्चों ने कितना याद किया है। आधुनिक समय में जहाँ बच्चों की सृजनात्मकता, नवाचार एवं विकास पर बल दिया जा रहा है वहाँ बच्चों की याददाश्त एवं समझ को बने-बनाए तरीके से जाँचना अप्रचलित एवं पुराना है जो कई बच्चों को कक्षा में बिल्कुल मौन रखता है जिससे वे भागीदारी और सीखने के समान अवसरों से वंचित हो जाते हैं। अच्छे अंक पाने वाले सफल बच्चे भी असफलता के डर से उतने ही भयभीत रहते हैं, उन्हें यह डर लगता है कि परीक्षा में अच्छा नहीं कर पाए तो उनकी अच्छी श्रेणी नहीं आ पाएगी। गलतियों को शिक्षा के आवश्यक भाग के रूप में स्वीकार किए जाने की ज़रूरत है और बच्चे के दिमाग से पूरे अंक न ला पाने के डर को भी निकाला जाना चाहिए।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के अनुसार, “मूल्यांकन का प्रयोजन नहीं है कि बच्चों को डर के दबाव में अध्ययन के लिए प्रेरित करना और बच्चों को नाम देना जैसे धीमी गति से सीखने वाला, होशियार, समस्यात्मक विद्यार्थी”। ऐसे में मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि के नवीन तरीकों को ढूँढ़ना होगा जो प्रतिस्पर्धा बढ़ाने का साधन नहीं होना चाहिए। यदि निष्पत्ति में गुणवत्ता की दरकार हो तो बच्चों के अलग-अलग स्तरों को विभाजित कर उनमें कुंठा भरना सही नहीं है।

बच्चों की उपलब्धि स्तर के साथ-साथ बच्चे की अभिरुचि, उसके स्वतंत्र रूप से सीखने की क्षमता

का मूल्यांकन होना चाहिए। यह समझना ज़रूरी है कि मूल्यांकन की प्रक्रिया को बदलकर बच्चे के सीखने के अनुभव पर आधारित मूल्यांकन किया जाए। सीखने की प्रक्रिया का मूल्यांकन होता है जिसमें निर्णय सीखने वाले के स्वभाव और गुणवत्ता को आधार बना कर लिया जाए जिसमें धीमी गति और तेज़ गति से सीखने वाले के रूप में तुलना, विभाजन एवं वर्गीकरण नहीं हो।

अगर कोई शिक्षा में गुणवत्ता चाहता है तो बच्चों का विभाजन कर उन्हें ऐसी श्रेणियों में डालना जिससे उनमें हीन भावना आ जाए, ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिए। मूल्यांकन ऐसे हो जो यह संभव कर सके कि कक्षा में विविधता का सम्मान हो और वह पूर्ण रूप में निखरे। विविध क्षेत्रों में उत्कृष्टता को मान्यता मिलनी चाहिए तथा उसका सम्मान होना चाहिए। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* आकलन के प्रति एकदम स्पष्ट है और इसमें जोर देकर यह कहा गया है कि योगात्मक आकलन का उद्देश्य तो सिर्फ़ याद करने का कौशल समझा है, उससे हटकर रचनात्मक आकलन बच्चे को सीखने के लिए बढ़ावा देता है और यह दक्षता आधारित भी है। इससे बच्चों के अंदर विश्लेषण, तार्किक चिंतन और अवधारणा की स्पष्टता को आराम से जाँचा जा सकता है, इसलिए आकलन का प्राथमिक उद्देश्य वास्तव में सीखने के लिए ही होना चाहिए, न कि वह इस प्रकार से कक्षा में सामाजिक स्तरीकरण को बढ़ावा दे।

विद्यालय आधारित आकलन की अनुशंसा लगातार की जा रही है जिसमें बच्चे की सीखने की प्रगति का कार्ड तैयार किया जाता है जहाँ पर बच्चे की जो बहुमुखी प्रतिभा है जिसमें उसके संज्ञानात्मक, भावात्मक और मनोगत्यात्मक पक्ष शामिल हैं, उन्हीं

पक्षों का आकलन होगा और उसको बहुआयामी प्रगति कार्ड पर अंकित किया जाएगा।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या मूल्यांकन सही अर्थों में किया जाएगा? तो उत्तर है हाँ, बिल्कुल ऐसा हो सकता है। यदि बच्चों के सामाजिक स्तरीकरण करने के लिए मूल्यांकन को संकीर्ण रूप में न सोचा जाए और न उपयोग किया जाए। जैसा कि *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* और *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, यह अनुशंसा करती हैं कि यदि विद्यालय आधारित आकलन किया जाए जो कि एक सतत एवं व्यापक मूल्यांकन का परिष्कृत रूप है और वह सही अर्थों में विद्यालयों में बच्चों के आकलन के लिए उपयोग किया जाए तो अवश्य ही बच्चों का सामाजिक स्तरीकरण भी कक्षा में नहीं होगा।

बच्चों का विद्यालय आधारित आकलन किया जाए जिसमें बच्चों के आकलन करने का जो जोर होगा, वह बच्चों के 'सीखने के लिए' पर होगा। कहने का अर्थ है कि बच्चों का रचनात्मक आकलन होगा और वह सीखने के एक पक्ष का नहीं अपितु वह बच्चों के सीखने के तीनों पक्षों का आकलन भी होगा, लेकिन ऐसा तो सतत एवं व्यापक मूल्यांकन में भी प्रावधान था कि बच्चे के तीनों पक्षों का आकलन किया जाए लेकिन शिक्षक का जोर बच्चों के योगात्मक आकलन पर ही रहा जिसमें वह बच्चों के उपलब्धि परीक्षण की उत्तर पुस्तिकाओं को जाँचने तक ही सीमित रहा है। कहीं ऐसा तो नहीं कि विद्यालय आधारित आकलन भी संकुचित रूप में ले लिया जाए और बच्चे का पूर्ण रूप से आकलन फिर से न हो तो ऐसी स्थिति से बाहर निकलने का सबसे आसान तरीका है कि शिक्षकों का विद्यालय आधारित आकलन पर शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रम जो कि समय-समय पर कराया जाता रहना

चाहिए और उसकी शिक्षकों के समक्ष जाकर प्रतिपुष्टि भी प्राप्त की जाए।

अब तो बहुत सारे ऐसे साधन हैं जहाँ पर शिक्षक यदि किसी शिक्षण-प्रशिक्षण केंद्र में नहीं जा पाते हैं तो वह ऑनलाइन साधनों द्वारा भी प्रशिक्षण प्राप्त कर स्कूल आधारित आकलन का अभ्यास कर सकते हैं जैसा कि शिक्षक निष्ठा प्रशिक्षण का मॉड्यूल ऑनलाइन कर सकते हैं जिसका आकलन संकुल स्तर पर जिला प्रशिक्षण संस्थान के द्वारा हो। साथ ही शिक्षकों को विभिन्न पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों के बारे में पूर्ण जानकारी रखनी होगी। इस प्रकार के बच्चे किस प्रकार से सीखते हैं, उसका भी प्रावधान शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम में होना चाहिए।

यदि हमारे शिक्षक सक्षम होंगे तभी वे इस प्रकार की कक्षा में सामाजिक स्तरीकरण को बढ़ावा नहीं देंगे। यहाँ यह कहना भी बहुत जरूरी होगा कि स्कूली पाठ्यक्रम और शिक्षण-प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम भी बदला जाए जिसमें मानवीय मूल्यों पर आधारित सामग्री शामिल की जाए, जैसे सभी व्यक्तियों के लिए सम्मान, सहानुभूति, सहिष्णुता, मानव अधिकार, लैंगिक समानता, वैश्विक नागरिकता और समावेशन। हमारे स्कूल के पाठ्यक्रम और शिक्षण-प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में किसी भी पूर्वाग्रह और रूढ़िवादिता को हटा दिया जाए और ऐसी सामग्री को शामिल किया जाए जो हमारे समुदाय के लिए प्रासंगिक और संबंधित हो; जो विविधता को सम्मान प्रदान करती हो।

निष्कर्ष

एक कक्षा जिसमें विभिन्न पृष्ठभूमि से आए बच्चे शामिल होते हैं और उनकी अपनी विशेषताएँ होती हैं तो कैसे सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में उनके

अपने अनुभव शामिल होते हैं। जहाँ हमें बच्चों के अनुभवों को सम्मान देना चाहिए वहाँ हम बच्चों पर अपनी गलती के कारण उन पर न सीखने का सूचक लगा देते हैं। ऐसा मूल्यांकन निःसंदेह बच्चों के संज्ञानात्मक पक्ष का होता है जिसमें सभी बच्चों के सीखने के पक्षों को शामिल नहीं किया जाता है ऐसा करने से मूल्यांकन संकुचित हो जाता है और बच्चे कक्षा में अपने आपको अलग-थलग पाते हैं तथा विद्यालय छोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं। जबकि अच्छी मूल्यांकन की प्रक्रिया बच्चों के सीखने का एक अभिन्न अंग बन सकती है। आकलन करने का उद्देश्य यह है कि बच्चों ने कितना सीखा और वह आगे सीखने के लिए कितने तैयार हैं, यह जाना जा सके। सही अर्थों में बच्चों का आकलन, बच्चों के सीखने के तीनों पक्षों का होना चाहिए। शिक्षक के द्वारा बच्चों के प्रतिदिन किए जाने वाले कार्य शामिल होने चाहिए और उन आँकड़ों का विश्लेषण कर बच्चों को, उनके माता-पिता को तथा अपने अपने लिए प्रतिपुष्टि प्राप्त करनी चाहिए। विविध पृष्ठभूमि से आए बच्चों के लिए विविध मूल्यांकन की प्रक्रिया को अपनाना होगा जिसका जोर बच्चों के 'सीखने के लिए' पर होगा जिसमें बच्चों की सीखने की गति का पता लगाना, उनकी कमी का पता लगाना और उसको दूर करने का आशय होना चाहिए। यदि ऐसा कक्षा में होता है तो सभी बच्चों के सीखने के सभी पक्षों का आकलन होगा तथा बच्चों की क्षमता तथा उनके सीखने की विविधता का भी सम्मान होगा। ऐसा होने से अवश्य ही कक्षा में सीखने-सिखाने का वातावरण बनेगा।

संदर्भ

- निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009. भारत का राजपत्र. संख्या 35. 27 अगस्त 2009. विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली.
- रा.शै.अ.प्र.प. 2006. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.
- . 2019. निष्ठा— स्कूल प्रमुखों और शिक्षकों की समग्र उन्नति के लिए राष्ट्रीय पहल— प्रशिक्षण पैकेज. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.
- शिक्षा मंत्रालय. 2020. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली.